सकता। उदाहरणार्थ, जल से रस तथा अग्नि से तेज को अलग नहीं किया जा सकता। इसी भाँति, जीव के सनातन धर्म को उससे अलग नहीं किया जा सकता। सनातन धर्म वस्तुतः जीव का नित्य स्वरूप ही है। अतएव श्री रामानुजाचार्य की प्रामाणिकता के आधार पर हम कह सकते हैं कि सनातन धर्म का आदि अथवा अन्त नहीं होता। इससे सिद्ध हो जाता है कि सनातन धर्म साम्प्रदायिक नहीं है, क्योंकि वह देश-काल की सीमाओं से मुक्त है। फिर भी विविध साम्प्रदायिक मत-मतान्तरों के अनुयायी भ्रमपूर्वक सनातन धर्म को भी साम्प्रदायिक मान बैठते हैं। परन्तु यदि आधुनिक विज्ञान के प्रकाश में गम्भीर अन्तर्दृष्टि से इस विषय का विवेचन किया जाये तो यह सत्य स्पष्ट दृष्टिगोचर होगा कि संसार के सब मनुष्यों के लिये ही नहीं, वरन् जगत् के सम्पूर्ण जीवों के लिये सनातन धर्म का प्रयोजन है।

सनातन धर्म से इतर सभी सम्प्रदायों (मतों) का आरम्भ विश्व-इतिहास से जाना जा सकता है। परन्तु सनातन धर्म के प्रवर्तन का कोई इतिहास उपलब्ध नहीं है, क्योंकि वह तो जीव में नित्य रहता है। जीव के सम्बन्ध में शास्त्रों का कथन है कि वह जन्म-मृत्यु से मुक्त है। गीता में भी उसे अजन्मा और नित्य कहा है। जीव सनातन तथा अविनाशी है, क्षणभंगुर शरीर के नष्ट हो जाने पर भी वह बना रहता है। 'सनातन धर्म' के स्वरूप को भलीभाँति हृदयंगम करने के लिये हमें 'धर्म' शब्द के धातुमूल को देखना चाहिए। 'धर्म' का अर्थ है, 'वह गुण जो किसी वस्तु के साथ नित्य बना रहता है।' अग्नि के साथ तेज और प्रकाश नित्य रहते हैं; तेज और प्रकाश के बिना 'अग्नि' शब्द कुछ अर्थ ही नहीं रखता। इसी प्रकार हमें जीवों के स्वरूपभूत अवयव (अंग) को जानना है। यही अवयव उसका नित्य सहचर है। वह नित्य सहचर उसका सनातन गुण है और वही सनातन गुण उसका सनातन धर्म है।

जब सनातन गोस्वामी ने श्रीचैतन्य महाप्रभु से जीव के स्वरूप के सम्बन्ध में जिज्ञासा की, तो श्रीमन्महाप्रभु ने उत्तर दिया कि जीव का स्वरूप श्रीभगवान् की सेवा करना है। श्रीचैतन्य महाप्रभु के इस कथन पर विचार करने से हमें यह सहज दृष्टिगोचर हो जायेगा कि प्रत्येक जीव निरन्तर किसी न किसी दूसरे जीव की सेवा में लगा रहता है। जीव अन्य जीवों की दो प्रकार से सेवा करता हुआ जीवन का उपभोग करता है। निम्न पशुवर्ग तो सेवक के समान मनुष्यों की सेवा करता ही है। 'क' मनुष्य 'ख' स्वामी की सेवा करता है, 'ख' 'ग' स्वामी की सेवा करता है, 'ग' 'घ' स्वामी की सेवा करता है, इत्यादि। इस परिस्थिति में हम देख सकते हैं कि मित्र मित्र की, माता पुत्र की, पत्नी पति की और पति पत्नी की सेवा में रत है, आदि आदि। यदि हम इस दिशा में आगे गवेषणा करते जायें तो पायेंगे कि ऐसा कोई जीव नहीं है, जो किसी दूसरे की सेवा न करता हो। राजनीतिज्ञ चुनाव-घोषणापत्र इसीलिए निकालता है जिससे जनता को विश्वास हो जाय कि वह वास्तव में उसकी सेवा कर सकता है। मतदाता उसे अपने मूल्यवान् मत यही समझकर देते हैं कि वह समाज की